पढ़ना-लिखना सीखना एक वैकल्पिक प्रयास

कमलेश चंद्र जोशी

आमतौर पर प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के 'पढ़ना-लिखना' सीखने को टुकड़ों में बांटकर देखा जाता है। इन कक्षाओं में शिक्षकों का पूरा ज़ोर बच्चों को वर्णमाला, मात्राएं, बारहखड़ी रटाने-दोहराने व सुलेख-इमला लिखवाने के अभ्यासों पर ही केन्द्रित रहता है। ये गतिविधियां पढ़ना-लिखना सिखाने में एक अर्थपूर्ण भूमिका नहीं निभा पातीं।

बच्चे जब पढ़ते हैं तो वे सिर्फ पढ़ते ही नहीं हैं बल्कि संबंध जोड़ने व अर्थ तलाशने की कोशिश भी करते हैं। बच्चों के 'पढ़ना-लिखना' सीखाने को अर्थपूर्ण बनाने के उद्देश्य से नालंदा संस्था के इन अनुभवों को बांटने की कोशिश की जा रही है।

हम लोगों ने जिस विद्यालय को चुना था वहां पहली, दूसरी व तीसरी कक्षा के 72 बच्चे थे, जो तकरीबन सात से दस वर्ष के बीच के थे। वे 'पिछड़े' ग्रामीण इलाकों से संबंध रखते थे। इनमें से कुछ बच्चे पहली बार इस अनौपचारिक विद्यालय में दाखिल हुए थे तो कुछ अन्य सरकारी विद्यालयों की पहली/दूसरी/तीसरी कक्षा की पढ़ाई बीच में छोड़कर घर बैठ गए थे।

हमारी कोशिश

बच्चों के 'पढ़ना-लिखना' सीखने को सार्थक बनाने के लिए सत्र की शुरुआत से ही हम लोगों ने बच्चों को एक पीरियड में पाठ्य पुस्तकों के अभ्यास करवाने के साथ-साथ, एक

और पीरियड 'पढ़ने-लिखने' की स्वतंत्र गतिविधियों के लिए निर्धारित किया। इसमें बच्चों के लिए विभिन्न तरह की पाठ्य सामग्री – चित्रात्मक बाल पुस्तकें, विभिन्न स्रोतों से संकलित की गई संदर्भ-युक्त, रोचक व अर्थपूर्ण पाठ्य सामग्री आदि का प्रयोग शुरू किया। हमने इन्हें कम्प्यूटर पर बड़े अक्षरों में टाईप करवाकर, चित्र चिपकाकर, फिर दस-दस प्रतियों में फोटो कॉपी करके व पन्नी चढ़ाकर बच्चों के साथ इस्तेमाल करना शुरू किया। कक्षा के ढांचे में भी परिवर्तन किया गया। अब बच्चे अकेले, अपने साथी के साथ, छोटे समूह में, शिक्षक के साथ आदि सभी तरीकों से पढ़ सकते थे।

इस पीरियड में कक्षा के सभी बच्चों को इन पुस्तकों/पाठ्य सामग्री को उलटने-पलटने तथा कक्षा दो-तीन के बच्चों को अपने ढंग से पढ़ने की पूरी छूट थी; जबकि पहली कक्षा में शिक्षिका बच्चों के साथ मिल बैठकर पाठ्य सामग्री पढ़ती/सुनाती थी। इस सामग्री पर बच्चों से बातचीत भी करती तथा उन्हें भी उलटने-पलटने का मौका देती और शब्दों को पहचानने में उनकी मदद करती। इसी तरह दूसरी-तीसरी कक्षा में शिक्षिकाओं द्वारा बच्चों के साथ पढ़ना, उनकी पढ़ने में मदद करना, शब्दों के अर्थ बताना, चित्रों के द्वारा अर्थ पकड़ने में मदद करना आदि कार्य शुरू किए गए। इसके साथ ही इन कक्षाओं में शिक्षिकाएं प्रत्येक बच्चे के पढ़ने पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देतीं। इस कार्य में शिक्षिकाओं को कोई दिक्कत भी नहीं थी क्योंकि विद्यालय की किसी भी कक्षा में 20 से अधिक बच्चे नहीं थे। बच्चों को अपने ढंग से पढ़ने की पूरी छूट थी। हां, शिक्षिकाओं का प्रमुख कार्य केवल पढ़ने के दौरान या बाद में इन्हें मदद करने का था।

इसी तरह लिखने में पाठ्य पुस्तकों के अलावा बच्चे स्वतंत्र रूप से लिखने का अभ्यास करते, चित्र भी बनाते। पहली कक्षा के बच्चे अधिकतर चित्र बनाने के ही अभ्यास करते। अपने आसपास के परिवेश के बारे में लिखते, अधूरी कहानियों को पूरा करते, चित्रों-शब्दों के आधार पर लिखते। यहां भी लिखने की शुद्धता की बजाए बच्चों की अभिव्यक्ति पर ध्यान दिया जाता था।

शिक्षिकाओं के साथ नियमित बैठकों में, हमने भाषा से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर समझ बनाने का प्रयास किया। इसमें पढ़ने के दौरान अनुमान लगाने, संदर्भ पकड़ने, अर्थ खोजने, दृश्य शब्दावली तथा लिखने में बच्चों की अभिव्यक्ति पर ज़ोर देने की चर्चाएं की गईं। उनका ध्यान इस तरफ भी आकर्षित किया गया कि 'पढ़ने-लिखने' में उनकी यांत्रिक त्रुटियों को निकालने की बजाए बच्चों की

भाषा सीखने की स्वाभाविक प्रक्रियाओं पर ज़्यादा ध्यान दें।

ऐसे भी पढ़ते हैं

'पढ़ना-लिखना' सीखने की इन प्रक्रियाओं के कई अवलोकनों में यह देखने को मिला कि बच्चे केवल हूबहू शब्दों-अक्षरों को पढ़ने की कोशिश नहीं करते। वे पढ़ने की प्रक्रिया में अपने पूर्वज्ञान व अनुभवों का प्रयोग करते हैं। उदाहरण के लिए एक दिन हमने देखा कि कक्षा तीन में पढ़ने वाला नौ वर्षीय सुग्रीव एक कहानी 'सूरज और चांद ऊपर कैसे गए' पढ़ रहा था। पढ़ते हुए कहानी के अंत में आए एक वाक्य 'वे भाग कर आसमान में पहुंचे और वहीं रहने लगे।' को उसने पढ़ा – 'वे भगवान के साथ आसमान में पहुंचे और वहीं रहने लगे।' यहां पर उसका पूर्वज्ञान था कि उसने सुन रखा था कि भगवान आसमान में रहता है।

इसी तरह कई बार ऐसा भी महसूस हुआ कि बच्चे नए शब्द को पढ़ने के लिए कई तरह से 'क्लू' या संकेत पकड़ते हैं। इसके लिए वे सबसे प्रमुख रूप से चित्रों का सहारा लेते हैं। एक दिन हम लोगों ने देखा कि कक्षा दो में पढ़ने वाली सात वर्षीय रेखा 'चींटा मोची' नामक कहानी पढ़ रही थी। उसे कहानी में आए शब्द 'गिंजाई' को पढ़ने में दिक्कत आ रही थी। लेकिन उसने एकाएक पाठ्य सामग्री में चित्र को देखकर तुरंत समझ लिया और बोली, 'गिंजाइयां इतने पैर'; आगे भी वह 'गिंजाई' के स्थान पर 'गिंजाइयां' उच्चारण करती रही और पढ़ती रही।

आठ वर्षीय वीरेन्द्र को कहानी में आए शब्द 'ध्वज' को पढ़ पाने में दिक्कत आ रही थी और न ही वह उसका अर्थ समझ पा रहा था। लेकिन जब उसने किताब में बने चित्र पर गौर किया तो उसे अर्थ समझ में आ गया और उसने ध्वज का अर्थ 'झंडा' बताया।

पढ़ते समय बच्चे शब्दों-वाक्यों का इस्तेमाल अंदाज़ा लगाकर भी कर लेते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि बच्चे अर्थ के प्रति सचेत रहते हैं। एक दिन कक्षा दो की सात वर्षीय सोनी को पढ़ते समय पुस्तक में आए एक वाक्य – 'बिट्टी को देखकर पिताजी मुस्कुरा उठे' में 'मुस्कुरा' शब्द थोड़ा कठिन लगा। उसने इसे पढ़ते समय 'खुश' जोड़ लिया और उसने पढ़ा – 'बिट्टी को देखकर पिताजी भी खुश हो उठे'। इस तरह से उसने अंदाज़ा लगाकर अर्थ बना लिया।

पढ़ते हैं . . . समझते हैं

कक्षा के अवलोकनों में यह बात भी उभरकर आई कि बच्चे अपनी पढ़ी हुई पाठ्य सामग्री का अर्थ स्वयं

समझने का प्रयास भी करते हैं। अगर अर्थ समझ में न आए तो वे फिर से प्रयास करते हैं। यहां ज़रूरत इस बात की होती है कि हम उन्हें पर्याप्त मौके दें। कक्षा दो का आठ वर्षीय वीरेन्द्र 'पापा जल्दी आना' नामक पत्र पढ़ रहा था। पढ़ने के उपरांत उससे पूछा गया कि उसने क्या पढ़ा? तो उसने पत्र में वर्णित खिलौनों का ज़िक्र किया और बताया, "यह एक कहानी थी।" लेकिन फिर उसे एकाएक लगा कि कहीं कुछ गड़बड़ है, उसे ठीक से समझ में नहीं आया। उसने बिना हिचक के कहा, "एक बार फिर से पढ़ लूं?" इस बार वह पूरी बात समझ गया और उसने बताया, "एक चिट्ठी है। यह चिट्ठी कमला ने पापा को लिखी है।" फिर उसने चिट्ठी में लिखी हुई बातों के बारे में भी बताया।

हमने यह भी देखा कि पढ़ने के दौरान अपरिचित शब्द बहुत मुश्किल पैदा नहीं करते। यहां इतना ध्यान देना ज़रूरी है कि बच्चों को दी गई पाठ्य सामग्री में ऐसे शब्द बहुत अधिक मात्रा में न आएं। ऐसे कई उदाहरण हमें मिले।

नौ वर्षीय प्रदीप कुमार 'गुठली' नामक कहानी पढ़ रहा था। इसमें आए शब्द 'आलू बुखारा' को वह नहीं जानता था। पढ़ने के दौरान संदर्भ को पकड़ते हुए वह कहानी के अंत में इतना समझ गया कि 'आलू बुखारा' ज़रूर कोई खाने वाला फल होता होगा।

इसी तरह आठ वर्षीय पिंकी को कहानी पढ़ते हुए 'विचित्र' शब्द का अर्थ नहीं समझ आया, लेकिन कहानी का सार समझ में आ गया। उसने शब्द के अर्थ के आसपास पहुंचने का प्रयास भी किया।

दूसरा पहलू भी . . .

बच्चों को पढ़ने के दौरान आने वाली समस्याओं में यह देखने को मिला कि कुछ बच्चे अपने पूर्व अनुभवों व अनुमानों के प्रति अत्याधिक आत्म विश्वासी होने के कारण जल्दबाज़ी में गलतियां कर जाते हैं। कक्षा तीन में पढ़ने वाला नौ वर्षीय नरपत सिंह एक दिन 'घोंघा' नामक कहानी पढ़ रहा था। वह घोंघा/घोंघे को घोड़ा/घोड़े ही पढ़ता रहा और कहानी के अर्थ को पकड़ नहीं पाया। इसके उपरांत शिक्षक के द्वारा ध्यान दिलाए जाने पर उसने उस पाठ को फिर से पढ़ा और अपने आप गलतियों को ठीक किया।

कुछ बच्चों का ध्यान केवल मुद्रित संकेतों पर ही रहता है। वे चित्रों पर बिल्कुल ध्यान नहीं देते और केवल मुद्रित शब्दों से ही जूझते रहते हैं। कक्षा दूसरी में पढ़ने वाला सात वर्षीय बाली चित्र-कथा पढ़ रहा था। वह कहानी में आए 'पिंजरा' शब्द को नहीं पढ़ पा रहा था, जबकि चित्रों में तीन जगह 'पिंजरा' बना हुआ था।

स्वतंत्र रूप से व बेरोक-टोक पढ़ने

का मौका देने से यह बात भी देखने में आई कि बच्चों का आत्मविश्वास काफी बढ़ गया था। वे बिना डर-हिचक के कठिन शब्दों को अपने साथियों व शिक्षकों से पूछ लेते थे। उन्हें यह चिन्ता नहीं रहती थी कि इस तरह पूछने पर कोई उन्हें डांटेगा, झिड़केगा।

उक्त उदाहरणों में यह बात गौर करने की है कि इन उदाहरणों में बच्चों का 'पढ़ना सीखना' एक अर्थपूर्ण अनुभव था। यहां बच्चे खुद पढ़ रहे थे, अर्थ निकालने का प्रयास कर रहे थे और पढ़ने का आनंद लेना सीख रहे थे।

हमारे मुल्क में ऐसी पाठ्य पुस्तकों की कोई कमी नहीं है जिनमें न सिर्फ पाठ नीरस होते हैं बल्कि संदर्भ खोजने या अर्थ-निर्माण की कोई गुंजाइश ही नहीं होती।

'जय चल। फल चख। मग रख। जल भर।' जैसे दसियों उदाहरण आपने देखे-पढ़े होंगे।

इस तरह की पाठ्य सामग्री बच्चों के लिए पढ़ना सीखने का एक बेजान अनुभव बनकर रह जाती है; जिसमें शिक्षक व बच्चों का पूरा ध्यान 'ग्राफोफोनिक्स' पर रहता है और वे भूल जाते हैं कि मुद्रित सामग्री में कुछ समझ भी जुड़ी हुई होती है।

कुछ लिखने के बारे में

जैसी कि हमने शुरू में चर्चा की थी कि हमने बच्चों के लिखने के प्रयासों में स्वतंत्र अभिव्यक्ति को ज़्यादा महत्व दिया। वर्तनी, व्याकरण व भाषा की शुद्धता हमारे लिए गौण बातें थीं।

बच्चों को स्वतंत्र रूप से लिखने का मौका देने से पूर्व उन्हें उनके परिवेश से जुड़ी विभिन्न विषय-वस्तुओं पर चित्र बनाने के मौके दिए जाते थे। इस तरह की गतिविधियों से उनकी सोच का दायरा बढ़ता और अभिव्यक्ति को जगह मिलती।

हमने देखा कि बच्चे शुरुआत में बहुत कम लिख पाते थे, उनके वाक्यों में एक बिखराव था और उनके पास एक सीमित शब्दावली थी। यह हम बच्चों के लिखने के कुछ शुरुआती उदाहरणों में देख सकते हैं। सत्र की शुरुआत में उन्हें कहानी लिखने के लिए एक चित्र दिया गया। उस पर कक्षा तीन में पढ़ने वाले बच्चों ने कुछ इस तरह के वाक्य लिखे।

.... रामू और अंजना आम तोड़ रही थी। तो जिसका पेड़ था, तो उसने रपटा कर कहा कि कौन आम तोड़ रहा है? अभी मरियहों। यह सुनकर वे भाग लिए और डर गए। आम छोड़ कर भाग गए।

– शशि, कक्षा 3, दस वर्ष

.... आम का पेड़ लगा है। और पेड़ पर बच्चे हैं। आम तोड़ रहे हैं। और कुछ बच्चे पेड़ पर चढ़

रहे हैं। और आम तोड़ने के लिए लंटके थे। और एक आदमी डंडा लेकर निकला। बच्चों को रपटाया।

– उमा देवी, कक्षा 3, दस वर्ष

.... बच्चे आम तोड़ रहे हैं। आम के पेड़ लगा है। लोग दौड़ लगा रहे हैं। आम जमीन पर पड़ा है। एक बच्चा डार पकड़े है। बादल दिख रहा है। बच्चे दौड़ लगा रहे हैं। आम लगे हैं। पेड़ में पत्ती लगी हैं।

– सुग्रीव कुमार, कक्षा 3, नौ वर्ष

नियमित रूप से स्वतंत्र लेखन के मौके मिलने से बच्चों में आत्म-विश्वास बढ़ा और उनकी हिचक भी कम हुई। और वे पहले के मुकाबले कहीं ज़्यादा लिखने लगे।

.... "हम सुबह उठी तो झाड़ू लगाई और राख भरी। राख भरकर चौका दिया। हाथ पैर धोकर खाना खाया। खाना खाकर बाल खींची और कपड़े पहनी और बैग लिया। स्कूल गई थी और स्कूल में हमने काम किया और घर लौटी तो हाथ-पैर धोकर खाना खाया। खाना खाकर नांद उलची और खेत गई थी और खेत से घर लौटी तो घास काटी और भैंस को चारा दिया और हमने हाथ पैर धोकर खाना खाकर रात हो गई तो हमने अपने बिस्तर पर सो गई।"

– खुशबु कक्षा 2, आठ वर्ष

यही सब गतिविधियां करते हुए

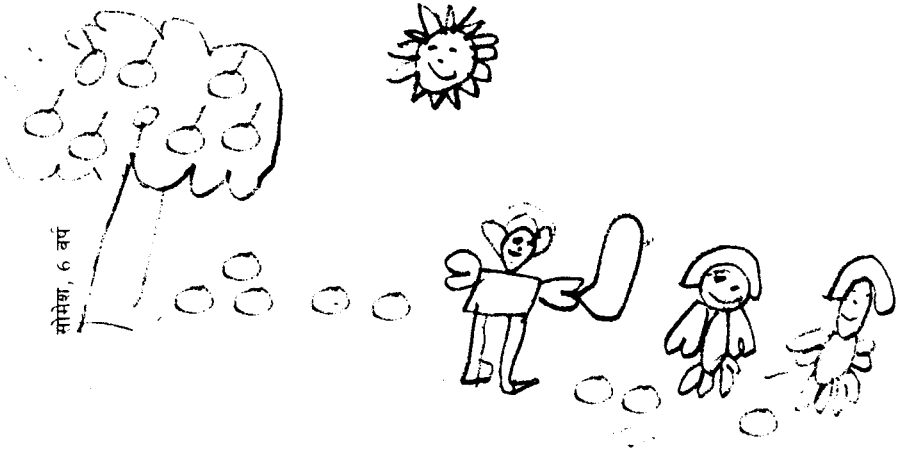

हमने लगभग छः महीने बाद आम के पेड़ व बच्चों वाला वही चित्र दोबारा बच्चों को दिया। इस बार बच्चों ने काफी विस्तार से लिखा था। बतौर उदाहरण यहां एक-दो नमूने पेश कर रहे हैं।

.... एक गांव था। गांव से बच्चे आम ढूंढने निकले। तो एक खेत में आम के दो पेड़ दिखाई दिए। तो उन सबने सलाह की चलो वह पेड़ दिख रहा है। तो उसमें के एक लड़के ने कहा कि इस पेड़ में बहुत सारे आम लटके हैं। तो सब बच्चों ने कहा चलो तो सब बच्चे चल दिए। तीन बच्चे पेड़ पर चढ़ गए। दो बच्चे आम बीनते थे। तब बच्चों ने देखा कि एक बाबा आता है तो उसने कहा सोनू और मोनू जल्दी उतरो एक बाबा आता है। और जल्दी ही बाबा आ गया। उसने एक लड़के को पकड़ कर पूछा। और वह लड़का आम लिहे था। उसने बाबा से कहा आम ले लो मगर हमें छोड़ दो।

– उमा देवी, कक्षा 3, दस वर्ष

.... बहुत समय की बात है। एक खेत में दो आम के पेड़ लगे हैं। तो बच्चे उस पर आम तोड़ रहे हैं। तब आदमी डंडा लेकर उन बच्चों को रपटा रहा है। तब आदमी ने जो आम नीचे पड़ा था उसे उठा कर अपने घर लौट आया था। तब उसी पेड़ पर बच्चे चुपचाप बैठे रहे और जब आदमी चले गए। तब तीनों बच्चे नीचे उतरे और घर चले गए थे। तब आदमी उसी पेड़ पर एक दिन लधर कर बैठ गया था तो पांचों बच्चे फिर आम तोड़े तो आदमी ने एक बच्चे को पकड़ लिया। चार भाग गए। और उसे पकड़े रहे। लड़के ने सोचा कि छुड़ाकर भागें। तो लड़के ने कस कर छुड़ाकर भाग गया। और तब पांचों बच्चे घर चले गए थे।

– सुग्रीव कुमार, कक्षा 3, नौ वर्ष

इसके अलावा सत्र के अंत तक आते-आते कुछ बच्चों के लिखने में परिपक्वता भी दिखने लगी।

समीक्षात्मक नज़रिया भी

बच्चों के 'पढ़ना-लिखना' सीखने के इस कार्यक्रम में जहां बच्चों ने अपने मन से लिखना शुरू किया, लिखने के प्रति सहज हुए, अपनी बातों को व्यक्त करने लगे, लिखने में रुचि लेने लगे; वहीं दूसरी तरफ पढ़ने के प्रति उनका रुझान बढ़ा और पढ़ने की नई सामग्री की तरफ भी वे लालायित हुए। उन्होंने आपस में मिलजुल कर पढ़ना शुरू किया। वे पढ़ी हुई सामग्री के बारे में बातचीत भी करने लगे। इस बातचीत में उनकी समालोचनात्मक सोच दिखाई

दी। इसका भी एक उदाहरण देना ज़रूरी होगा। एक दिन कक्षा तीन की दस वर्षीय शशि 'पाली का घोड़ा' कहानी पढ़ रही थी।

इस कहानी का सार यह है कि एक गांव में पाली नाम की एक लड़की थी। वह अपनी गुल्लक में पैसे जमा करती है और सोचती है कि जब शहर जाने का मौका मिलेगा तो वहां से अपने लिए वह खिलौना खरीदेगी। एक दिन वह अपने पिता के साथ शहर जाती है और उसे एक दुकान पर लकड़ी का घोड़ा पसंद आ जाता है। वह दुकानदार से उसका दाम पूछती है। तो वह कहता है – 'तीन सौ रुपए', लेकिन पाली के पास सिर्फ पचपन रुपए ही थे। इस कारण वह घोड़ा नहीं खरीद पाती है। वह उदास हो जाती है और अपने पापा के साथ घर आ जाती है। तब उसके दादा पूछते हैं, "बेटा पाली क्यों उदास हो?" तो वह पूरी बात बताती है। तब उसके दादा कहते हैं, "बस इतनी-सी बात है लो मैं तुम्हारा घोड़ा बन जाता हूं।" और पाली उनकी पीठ पर बैठ जाती है और दादा कहते हैं, "चल मेरे घोड़े टिक-टिक-टिक" और इस तरह कहानी समाप्त हो जाती है।

जब हमने इस कहानी पर बात की और शशि से पूछा, "यह कहानी तुम्हें कैसी लगी, कहानी में क्या-क्या था?" तब उसने बताया कि उसे यह कहानी थोड़ी अच्छी और थोड़ी खराब लगी। उसने कहा, "अगर अंत में पाली को दुकान वाला घोड़ा मिल जाता तो अच्छा रहता।" शशि की यह बात इसलिए महत्वपूर्ण है कि उसने अपने पढ़े हुए को समझकर टिप्पणी दी, जो पढ़कर समझने का एक महत्वपूर्ण पहलू है। जब हम अपनी पढ़ी हुई सामग्री पर टिप्पणी देते हैं और अपने अनुभव और विचार जोड़ पाते हैं, तभी पढ़ने को मुकम्मल समझा जाता है।

कक्षा में इस तरह के हमें कई उदाहरण देखने को मिले, जिससे पता चलता है कि बच्चे पढ़ने में रुचि लेते हैं, पढ़ी हुई बातों को बताते हैं, अपने अनुभवों से जोड़ पाते हैं व पढ़े हुए को समझ पाते हैं। वे पढ़ने के प्रति आत्मनिर्भर हुए हैं। कुछ बच्चों को कक्षा में स्वतंत्र रूप से पढ़ते हुए, किताबों में रुचि लेते हुए आसानी से देखा जा सकता है। इससे उनमें काफी आत्मविश्वास बढ़ा है। बच्चों के इस आत्मविश्वास का एक उदाहरण देना ज़रूरी होगा।

एक दिन कक्षा दूसरी का सात वर्षीय सोनू चित्रात्मक पुस्तक 'भालू का बच्चा' काफी आत्मविश्वास से पढ़ रहा था। जब हमने उससे बात की कि इस किताब में क्या था और उसने क्या पढ़ा? तो उसने पूरे आत्मविश्वास के साथ बताया – "भालू का बच्चा बेर-बेर पेड़ पर चढ़त, गिर पड़त

भदाक से। बेर-बेर लुढ़क जात रहा। चिड़िया उइके लिए फूल ले लाई, तबहूं उइका रोना नहीं थमा। बंदर केला लाईस, गिलहरी अखरोट लाईस। तबहूं न थमा रोना। तोता सने मधुमक्खी कहिस पत्ता तूड़ लाव। चींटी दोना बनाई के दिहिस, सींक लगाई के। मधुमक्खी शहद लाईस पेड़ पर से। भालू के बच्चे का दिहिस। तौ वव चाखै लाग, हंसय लाग भालू का बच्चा।" सोनू ने इस तरह किताब का सार पूरी तरह बताया।

सोनू के इस कहानी के सार को बताने में जो आत्मविश्वास की झलक दिख रही थी वह उसके पढ़े हुए में आनंद लेने को चित्रित कर रही थी। उसके बताने से हमें यह लगा कि इस कहानी को पढ़कर उसने 'पढ़ने का सुख' लिया है।

इस उदाहरण का ज़िक्र हमने इसलिए किया कि 'पढ़ना-सीखने' का एक महत्वपूर्ण अर्थ यह भी है कि हम पढ़ने का मज़ा ले पाएं। क्या ऐसा हम प्राथमिक कक्षाओं में 'पढ़ना' सिखाते समय सोचते हैं?

व्यापक परिप्रेक्ष्य हो

अपने अनुभवों के आधार पर हमें लगता है कि 'पढ़ना-लिखना' सिखाने के प्रति प्राथमिक विद्यालयों में एक दीर्घकालिक व व्यापक परिप्रेक्ष्य होना चाहिए। इससे पढ़ना सीखने के साथ-साथ पाठ्य सामग्री को पहचानना, उससे जुड़ाव बनाना, उसकी विवेचना करना, उसका इस्तेमाल करना आदि दक्षताएं आनी चाहिए। जिसे शायद कक्षा की केवल एक पाठ्य पुस्तक से नहीं पाया जा सकता। इसके लिए हमें कोई वैकल्पिक रास्ता बनाना पड़ता है।

कुल मिलाकर बच्चों को 'पढ़ना-लिखना' सिखाने का एक छोटा-सा प्रयास बच्चों के सीखने-सिखाने को एक अर्थपूर्ण प्रक्रिया बनाता है। जहां शिक्षक -बच्चे, बच्चे-बच्चे सभी आपस में मिलकर सीखते हैं, वहां सीखने-सिखाने की प्रक्रिया दोतरफा बनती है।

कमलेश चंद्र जोशी: लखनऊ की नालंदा संस्था से संबद्ध हैं। वे नालंदा संस्था से प्रकाशित होने वाली त्रैमासिक पत्रिका 'प्रारम्भ शैक्षिक संवाद' का संपादन भी करते हैं।

इस लेख में बच्चों द्वारा लिखे गए अंशों को यथासंभव ज्यों-का-त्यों रखा गया है।